ISSN : 2583-2948

संपादकीय

सभी प्राणियों से श्रेष्ठ मानव, विकास के तमाम दावों और अपनी उपलब्धियों के सभी ढिंढोरों के बावजूद आज द्वंद्व, तनाव, अलगाव, विखंडन और विस्थापन आदि के जिस मुकाम पर पहुंचा है, वह उसकी वैचारिक यात्रा और प्रगति की परियोजना पर कई अनसुलझे प्रश्न खड़ा करती है। इन्हीं में से एक प्रश्न भाषायी अस्मिता का है। समाज में भाषाविज्ञान भाषा की संरचना और प्रयोग के विभिन्न तरीकों के साथ स्त्री- पुरुष की सामाजिक भूमिका के अन्तर्संबंध का भी अध्ययन किया जाता है। इस अध्ययन में भाषा और जातीयता तथा भाषायी अस्मिता का अध्ययन मुख्य केंद्र में आता है। भाषायी अस्मिता का तात्पर्य है – भाषा बोलने वालों की अपनी पहचान। भाषा की इसी पहचान का संबंध सत्ता से होता है जो हमें ताकत देती है। भाषा के माध्यम से राष्ट्रीय अस्मिता की पहचान के लिए एक भारतीय भाषा का प्रतीक के रूप में होना जरूरी है। व्यावहारिक धरातल पर हिन्दी राष्ट्रभाषा और संपर्क भाषा के दोनों रूपों में सिद्ध होने पर भी प्रशासनिक मान्यता प्राप्त नहीं कर सकी है। यह याद रखना आवश्यक है कि राष्ट्र की संकल्पना से सम्बद्ध आर्थिक और प्रशासनिक प्रयोजनों की भाषा राजभाषा है जो राजनीतिक सफलता का आधार है। राष्ट्रभाषा की संकल्पना इसके विपरीत राष्ट्रीयता के आधार पर जातीय प्रामाणिकता और सामाजिक अस्मिता की भाषा होने के कारण सामाजिक – सांस्कृतिक एकता का आधार है। गांधी जी के अनुसार राष्ट्रभाषा के लिए उसके बोलने वालों का बहुसंख्यक होना, देश के लिए उसका सहज रूप से उपलब्ध होना, धार्मिक – आर्थिक- राजनीतिक क्षेत्र में माध्यम भाषा बनने की शक्ति होना और उसका सरकारी कर्मचारियों के लिए सहज – सुलभ होना ये चार गुण होने जरूरी हैं, और हिन्दी ऐसी ही भाषा है। अत: राष्ट्रभाषा के लिए हिन्दी से बढ़कर उपयुक्त कोई अन्य भाषा उसके समकक्ष नहीं ठहरती। दूसरी जो विडम्बना है वह यह कि अङ्ग्रेज़ी को हिन्दी के स्थानापन्न भाषा के रूप में उभरने की शासकीय प्रक्रिया। सच यह है कि इस प्रक्रिया में भाषा को समाज से जोड़ने वाले तत्वों को अनदेखा कर उन्हें समाप्त कर दिया गया जिससे हिन्दी का विरोध शुरू हो गया। हमारी एक अन्य भूल यह भी है कि राजभाषा और राष्ट्रभाषा के पीछे के प्रयोजनों के सही संदर्भ को न समझकर हमने उन्हें द्वंद्व के रूप में उभारकर अपनी भाषायी समस्या का हल ढूँढने का प्रयत्न किया है।

हिन्दी और राष्ट्रीयता के संबंध आज बहुत जटिल हो गए हैं। संचार – माध्यमों की बढ़ती महत्ता भी इसमें अलग अलग भूमिका का निर्वहन कर रही है जो कभी कभी जनहित में होता है तो कभी जन सैलाब ला देता है। भाषायी संघर्ष का उन्मूलन किए बिना एक राष्ट्र एक भाषा की संकल्पना साकार नहीं हो सकती। हिन्दी के संदर्भ में एक ध्रुव सत्य यह है कि – वह हमारी राष्ट्रीय अस्मिता का प्रमुख तत्व ही नहीं है वरन यह राष्ट्र निर्माण प्रक्रिया का एक विशेष विषय भी है।

अनुपमा तिवारी

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी